International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 6; November 2016; Page No. 14-16

कामायनी में मानवतावाद

बबिता
शोध छात्रा, भारतीय भाषा केन्द्र, भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत।

सारांश
मनुष्य, प्रकृति और उदात्त मानवीय मूल्य के संतुलित संयोग से मानवतावाद का निर्माण होता है जो विश्व–सभ्यता और संस्कृति के सतत विकास का मूल आधार है। यही कारण है कि संस्कृति के अनिवार्य अंग साहित्य में भी मानवतावाद का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। छायावाद के चार स्तम्भों में से एक जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित महाकाव्य 'कामायनी' आधुनिक हिन्दी साहित्य के सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थों में से है। कामायनी के मनु समस्त मानवीय विकारों एवं दुर्बलताओं के यथार्थ और कुछ सीमा तक खल चरित्र हैं, जबकि श्रद्धा कामायनी का सबसे उदात्त और मानवतावादी चरित्र है जिसके माध्यम से जयशंकर प्रसाद मानवतावाद के महत्व का प्रतिपादन करते हैं।

मूल शब्द: मानवतावाद, सभ्यता, संस्कृति, समरसता, समाज, यथार्थ, उदात्त।

प्रस्तावना

मानव समाज सदाचार पर टिका हुआ है। जिस समाज में उदात्त मानवीय मूल्य, यथा–नैतिकता, ईमानदारी, प्रेम, करुणा, भाईचारा आदि जितनी प्रमुखता से पोषित होंगे, वह उतना ही आदर्श, सशक्त और विकासशील होगा। किंतु मानव समाज का पूर्ण विकास तभी संभव है जब वह प्रकृति को भी अपना अभिन्न अंग समझे। जितना महत्वपूर्ण एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य के प्रति व्यवहार है, उतना ही महत्वपूर्ण है मनुष्य का प्रकृति के प्रति व्यवहार। अतः मनुष्य और प्रकृति दोनों अभिन्न रूप से परस्पर जुड़े हुए हैं। मनुष्य, प्रकृति और उदात्त मानवीय मूल्य, जब इन तीनों का संयोग होता है तो मानवतावाद की निर्मिति होती है। विलियम वर्ड्सवर्थ का भी मानना है कि ''मानव आध्यात्मिक उन्नयन और मानवता की प्राप्ति तब ही कर सकता है, जब वह प्रकृति के साथ पूर्ण तादात्म्य स्थापित कर ले।''[1]

मानवतावाद एक दर्शन है, जो शुरुआत में मनुष्य को ही केन्द्र में रखकर चला, किंतु कालांतर में इसमें और भी जरूरी घटक जुड़ते गए ; उसकी शाखाएँ–प्रशाखाएँ बनती गईं और इसने एक विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लिया। मानवतावाद के चिंतकों की सुदीर्घ परम्परा में प्रथम् दार्शनिक यूनान के प्रोटागोरस का नाम लिया जाता है। मानवतावाद के संदर्भ में प्रोटागोरस के सिद्धांत का उल्लेख करते हुए डॉ0 भगवान देव यादव लिखते हैं–

''ऐतिहासिक विकास की इस परम्परा में हम सबसे पहला नाम यूनानी दार्शनिक प्रोटागोरस (5वीं शताब्दी ई0पू0) का पाते हैं, जो स्पष्ट रूप से मानवतावाद की चर्चा कर सका है। उसका प्रसिद्ध वाक्य 'मनुष्य सब वस्तुओं का मापदण्ड है' यद्यपि मानवतावादी दर्शन के आत्मनिष्ठ पक्ष का ही उद्घाटन करता है, तथापि पाश्चात्य भौतिकवादी चिंतन के क्षेत्र में उसका ऐतिहासिक महत्व है।''[2]

मानवतावादी दर्शन के विकास में पाश्चात्य एवं भारतीय, अनेक विद्वानों का महत्वपूर्ण योगदान है। इनमें सुकरात, डेमोक्रीट्स, एपीक्यूरस, फ्रांसीसी दार्शनिक ला मात्री, वाइन द हेल्वाक; जर्मन दार्शनिक फायरबास, कार्लमार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स; इंग्लैण्ड के बर्टेण्ड रसेल तथा अल्बर्ट आइंसटीन, सर आर्थरकीथ, ए0न0 ह्वाइटहेड, सर जूलियन हक्सले, भारतीय विद्वान मानवेन्द्रनाथ राय आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं।[3]

'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भारतीय सांस्कृतिक अवधारणा मानवतावाद का ही उद्घोष है। साहित्य शुरू से ही समाज और संस्कृति के समीक्षक और पथ–प्रदर्शक की भूमिका में शामिल एक महत्वपूर्ण सूत्र रहा है। अतः, हर दशा में इसे मानवतावादी विचारधारा का पोषक होना ही है। इस दृष्टि से हिन्दी साहित्य के लगभग सभी महत्वपूर्ण चरण मानवतावाद के वाहक और पोषक रहे हैं।

छायावाद हिन्दी साहित्य का ऐसा कालखण्ड है जिसमें विपुल मात्रा में मानवतावादी साहित्य की रचना हुई है। इस संदर्भ में कृष्ण मुरारी मिश्र लिखते हैं–

> ''प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी आदि सभी छायावादी कवियों ने भारतीय दार्शनिक विचारधारा के किसी न किसी दृष्टिकोण को अवश्यक स्वीकार किया है। यह दार्शनिक भावभूमि ही उनके युग–सजग व्यक्तित्व से समन्वित होकर मानवतावादी दृष्टिकोण के रूप में प्रस्फुटित हुई है। छायावादी कवियों के समग्र जीवन–दर्शन का चरम विकास समष्टि कल्याण अथवा मानवतावाद में लक्षित होता है। इन कवियों द्वारा प्रतिपादित समष्टि धर्म में मानवता का कल्याण करने की बलवती अभिलाषा सन्निहित है। इनमें समाज के पीड़ित, शोषित और उपेक्षित वर्ग के प्रति तीव्र संवेदना का भाव है।''[4]

जयशंकर प्रसाद छायावाद के चार स्तम्भों में से एक हैं। उनकी रचनाओं में मनुष्य मात्र की चेतना का विस्तार लक्षित होता है। उनका मुख्य ध्येय भारतीय संस्कृति एवं जीवन के प्रमुख मूल्यों की पुनर्स्थापना था, जिसमें मानवता सर्वोपरि थी। अपनी रचनाओं और पात्रों द्वारा उच्च मनवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा एवं रक्षा में प्रसाद सदैव प्रयत्नशील रहे। समता, स्वतंत्रता, प्रेम, विश्व–बंधुत्व आदि भाव उनकी रचनाओं में प्राण–वायु की तरह प्रवाहित होते हैं। उनके विषय में प्रो0 कल्याणमल लोढ़ा लिखते हैं–

> ''प्रसाद ने मानवतावादी (केवल मानववादी नहीं) विचारधारा को आधार बनाकर विश्व–चेतना का निरूपण अपनी रचनाओं में किया। व्यष्टि और समष्टि के समरसीभूत होने से उनके सभी उत्कृष्ट पात्र मानववादी आदर्शों के मूर्त रूप हैं।[5]

'कामायनी' प्रसाद का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह छायावादी मानवतावाद का प्रखर उद्घोष है। 'कामायनी' का प्रकाशन 1936 ई0 में हुआ था। यह ग्रन्थ प्रसाद की परिष्कृत मानवीय चेतना का विस्तृत रूप है। 'कामायनी' की कथा का स्रोत उपनिषद है (छांदोग्य, शतपथ ब्राह्मण आदि) जिसमें जल प्लावन (प्रलय) की घटना के पश्चात आदि पुरुष मनु और श्रद्धा द्वारा मानवीय सृष्टि को पुनः प्रारम्भ करने की कथा है। प्रसाद ने इस मिथक के माध्यम से मानवता के

विकास का रूपक रचा है। स्वयं जयशंकर प्रसाद के अनुसार – ''यदि श्रद्धा और मनु अर्थात् मनन के सहयोग से मानवता का विकास रूपक है, तो भी बड़ा ही भवमय और श्लाघ्य है। यह मनुष्यता का मनोवैज्ञानिक इतिहास बनने में समर्थ हो सकता है।''[6]

कामायनी की कथा मुख्यतः तीन पात्रों–श्रद्धा, मनु, इड़ा तथा पन्द्रह सर्गों यथा– चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य, आनन्द पर आधारित है।

'कामायनी' पर बहुत सटीक टिप्पणी करते हुए शंभुनाथ जी लिखते हैं– ''कामायनी के दर्शन का केन्द्र बिन्दु है आदर्शवादी मानवता। इसकी धुरी है श्रद्धा। वह मनु को देव सभ्यता के सांमती दंभ से निकालकर कर्मशील और सर्जक व्यक्तित्व ही नहीं प्रदान करती, बल्कि उन्हें जीवन की पूर्णता और पारदर्शिता से भी परिचित कराना चाहती है। लेकिन मनु आधुनिक मनुष्य के व्यक्तिवादी जीवन की विडम्बनाओं को उजागर करते हुए वस्तुतः अपनी क्षुद्र और विकृत कामनाओं के लिए धरती को नरक में बदल देना चाहता है। श्रद्धा आधुनिक मानव जीवन में प्रवृत्तिमूलकता, स्वच्छंदता, उदारता, समता, करुणा, मधुरिमा, लोक मंगल, सौहार्द, समता, सादगी और विश्वनीड़ का संदेश लेकर आती है, जो समग्रता में आदर्शवादी मानवता का संदेश है। वह मनुष्य की उदात्त चेतना है, जिसका निर्माण वस्तुतः स्वाधीनता संग्राम काल के उच्चतर मानवीय तत्वों से हुआ है।''[7]

कामायनी के मनु एक ओर जहाँ समस्त मानवीय विकारों के, मानवीय दुर्बलताओं के यथार्थ और कुछ सीमा तक खल चरित्र हैं, वहीं दूसरी ओर श्रद्धा कामायनी का सबसे उदात्त मानवीय चरित्र है। हालांकि यहाँ पर यह भ्रम कदापि नहीं होना चाहिए कि श्रद्धा अपनी उदात्तता में वायवीय चरित्र बनकर यथार्थ से दूर हो जाती है। मनु और श्रद्धा दोनों भारतीय समाज के यथार्थ चरित्र का प्रतिनिधित्व करते हैं। हो सकता है कि मनु के व्यक्तित्व में जितनी कमजोरियाँ हैं, उतनी किसी व्यक्ति में यथार्थ रूप में न हों, किंतु श्रद्धा तो पूरी तरह भारतीय नारी की प्रतिनिधि है– करुणा, त्याग, ममता, सेवा, समझदारी, परोपकार आदि गुणों से युक्त; पति चाहे जैसा भी हो, उसके प्रति पूरी तरह समर्पित। वह मनु की प्रेरणा है। मनु द्वारा निरीह पशुओं की बलि पर वह उन्हें धिक्कारते हुए उनसे प्रश्न करती है–

''और किसी की फिर बलि होगी किसी देव के नाते;
कितना धोखा! उससे तो हम अपना ही सुख पाते।

ये प्राणी जो बचे हुए हैं इस अचला जगती के;
डनके कुछ अधिकार नहीं क्या वे सब ही हैं फीके!

मनु! क्या यही तुम्हारी होगी उज्ज्वल नव मानवता?
जिसमें सब कुछ ले लेना हो हंत! बची क्या शवता!''[8]

श्रद्धा के माध्यम से यह प्रसाद की मानवतावादी दृष्टि है। मानवेतर प्राणियों को भी धरती पर जीने का, स्वच्छंद विचरण करने का उतना ही अधिकार है जितना मानवों को। यह पृथ्वी उतनी ही सब की है जितनी मानव की, किंतु अपने मद में चूर मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए सब कुछ नष्ट करता जा रहा है। वह भूल चुका है कि सृष्टि समन्वय और संतुलन से ही विकास करती है। मानवेतर प्राणियों के अस्तित्व को खतरे में डालता मनुष्य यह नहीं समझ पाता है कि वास्तव में वह स्वयं के अस्तित्व को खतरे में डाल रहा है। इन स्थितियों को कामायनीकार ने बहुत अच्छी तरह समझा और समझाया है। अपने व्यापक मानवीय मूल्यों के कारण ही यह कृति हर काल में प्रासंगिक है। कामायनी की नायिका श्रद्धा के मानवतावाद में सब के लिए जगह है–

''अपने में सब कुछ भर कैसे व्यक्ति विकास करेगा?
यह एकांत स्वार्थ भीषण है अपना नाश करेगा।

औरों को हँसते देखो मनु हँसो और सुख पाओ;
अपने सुख को विस्तृत कर लो सबको सुखी बनाओ।''[9]

औरों तक सुख का विस्तार ही वास्तव में अपने सुख की सार्थकता है और इसकी अधिकतम संभावना एक स्त्री में ही होती है। ऐसी ही स्त्री का आदर्श रूप है श्रद्धा, जिसके हृदय में सर्वसुखवाद का मानवतावादी प्रसार है। शंभुनाथ लिखते हैं–

''श्रद्धा एक ऐसे दौर में आदर्शवादी मानवता है, जब पूँजीवाद उत्थानशील दशा में था। पैसा बहुत कुछ था, पर सब कुछ न था। प्रकृति से केवल द्वंद्व नहीं राग का संबंध भी था।''[10]

शंभुनाथ का यह कथन हमारे संकटकालीन समय में श्रद्धा के महत्व और उस जैसे आदर्शवादी चरित्र की प्रासंगिकता का संकेत है। आज के अतीव भौतिकवादी समय में भले ही उसके आदर्शों का उपहास किया जाय, लेकिन यह निर्विवाद सत्य है कि जीवन का ध्येय इन्हीं आदर्शों के माध्यम से प्राप्त होता है–

''सुख समीर पाकर, चाहे हो वह एकांत तुम्हारा;
बढ़ती है सीमा संसृति की बन मानवता धारा।''[11]

जीवन के किसी भी क्षेत्र में, किसी के लिए भी हिंसा मानवता की शत्रु है। एक व्यक्ति शक्तिशाली बनकर दूसरों की निरीहता का लाभ उठाए, अपनी शक्ति का प्रदर्शन करे और उस पर मिथ्या अहंकार करे, यह विचार और व्यवहार मानव के विरुद्ध तथा पूरी मानवता के लिए घातक है। कामायनी 'जियो और जीने दो, के सिद्धांत की प्रतिपादक है–

''पर जो निरीह जीकर भी कुछ उपकारी होने में समर्थ;
वे क्यों न जियें, उपयोगी बन इसका मैं समझ सकी न अर्थ!

वे द्रोह न करने के स्थल हैं जो पाले जा सकते सहेतु;
पशु से यदि हम कुछ बेहतर हैं तो भव–जल निधि में बनें सेतु।[12]

यह मनुष्य की सामान्य प्रवृत्ति है कि वह' अधिकारों की लड़ाई तो लड़ता है, मगर कर्तव्यों की चर्चा तक नहीं करना चाहता। कर्तव्य के प्रति उपेक्षा–भाव और अधिकार के प्रति मोह भी मानवता के लिए एक संकट ही है। कृष्ण मुरारी मिश्र लिखते हैं–

''अधिकारों का मोह मानव–जीवन की एक महत्वपूर्ण समस्या है। प्रसाद जी का मत है कि मानव–समाज में प्रत्येक अधिकारी के अधिकारों पर नियंत्रण होना चाहिए, निर्बाधित अधिकार किसी को नहीं दिए जाने चाहिए क्योंकि ऐसे अधिकारी ही मानवता को विघटित करते हैं।''[13]

कामायनी अधिकार और कर्तव्य के संतुलन की बात करती है। वह समरसता और समन्वय पर बल देती है। यह विचार मानवता का प्रबल पोषक है। समरसता के माध्यम से प्रसाद समानता, सामंजस्य और बंधुत्व की वकालत करते हैं। श्रद्धा अपने पुत्र को समरसा का उपदेश देती है–

''सब की समरसता का प्रचार
मेरे सुत, सुन माँ की पुकार!''[14]

मानवता की संपूर्णता का एक महत्वपूर्ण और अनिवार्य पक्ष है स्त्री–पुरुष समानता। कामायनी में इस लैंगिक समानता की भी बात की गई है। जब तक स्त्री–पुरुष कंधे–से–कंधा मिलाकर नहीं चलेंगे तब तक सम्बन्धों में विषमता ही व्याप्त रहेगी, जो अन्ततः पूरी मानवता के लिए बाधक और घातक ही सिद्ध होगी–

''तुम भूल गए पुरुषत्व मोह में कुछ सत्ता है नारी की,
समरसता है संबंध बनी अधिकार और अधिकारी की।''[15]

कामायनी में शैव दर्शन, प्रत्यभिज्ञा दर्शन, आनन्दवाद आदि कई दार्शनिक–आध्यात्मिक विचारधाराओं को शामिल किया गया है। इन सब की उपस्थिति का एकमात्र उद्देश्य मानवतावाद की स्थापना है। विभिन्न भारतीय दार्शनिक मतवादों के माध्यम से भी जयशंकर प्रसाद मानवतावाद का ही प्रसार करना चाहते हैं। इस संदर्भ में शंभुनाथ लिखते हैं–

> ''कामायनी में मानवतावाद ही केन्द्रीय दर्शन है। भूमा, सामारस्य और आनन्दवाद सिर्फ उसकी आध्यात्मिक सजावटें हैं। प्रसाद मानव जीवन में भेद–भाव के विरोधी थे और अखंड मानवता के गायक थे। वे सामंजस्यवाद के पक्षधर थे। विश्व में विषमता इसलिए है कि कहीं सिर्फ दुख है और कहीं सिर्फ सुख। दुख और सुख दोनों का बँटवारा हो जाना चाहिए, तभी जीवन में समग्रता का बोध पनपेगा और केवल तभी देश की चौहद्दियों को तोड़कर अखंड मानवता का वैश्विक विकास होगा। मानव जीवन के उच्चतर मूल्यों और परम्पराओं को लेकर आधुनिकीकरण तकनीकी प्रगति की ओर इस तरह बढ़ा जाए कि आज का मनुष्य अखंड मानवता का अनुभव कर सके, वह सुख और दुख–दोनों में हिस्सा ले सके।''[16]

इसमें कोई संदेह नहीं कि कामायनी की पूरी कथा प्रसाद की मानवतावादी दृष्टि से संपन्न है। पौराणिक मिथक के माध्यम से कथा–क्रम के विकास के लिए कल्पना का सहारा अवश्य लिया है, जिसे वे कामायनी के 'आमुख' में स्वीकार भी करते हैं। किन्तु अन्तिम अध्यायों के आधार पर इस महाकाव्य पर पलायनवाद का भी आरोप लगता रहा है। दर्शन, रहस्य, आनन्द आदि सर्गों में प्रसाद का ''शैव दर्शन स्पष्ट है। कथा सृष्टि में इसका योगदान नहीं है। प्रसाद के शैव दर्शन को समझने में ये सहायक हैं। आनन्द तो शिव मिलन की कल्पना है– शिवधाम जहाँ भेद नहीं केवल समरसतापूर्ण आनन्द है।''[17]

कामायनी की कथा में प्रसाद अध्यात्म का मोह छोड़ नहीं पाये हैं। समरसतापूर्ण–समानतापूर्ण परिवेश के लिए वे 'रामराज्य' की तर्ज पर 'शिवधाम' की कल्पना करते हैं, जहाँ पहुँचकर मानव में प्रेम और करुणा का संचार हो, वह अपनी तमाम स्वभावगत कमियों–बुराइयों पर विजय प्राप्त कर सके और मनुष्य होने की कसौटी पर खरा उतर सके। कामायनी में आध्यात्म और दर्शन के बिंदु पर डॉ0 नगेन्द्र की एक महत्वपूर्ण टिप्पणी है–

> ''कामायनी की कथा–वस्तु एकान्त विरल और आयाम अत्यन्त विराट है– जिसका निर्वाह केवल दर्शन और रूपक अर्थात दार्शनिक–रूपक के द्वारा ही संभव था। अतः एक देश और एक काल की परिधि में सीमित रचना–विधान का आकलन करने वाले प्रचलित प्रतिमान उसके साथ न्याय नहीं कर सकते। कामायनी का मूल्यांकन करने के लिए उसकी अपनी समग्र संकल्पना में से ही ऐसे व्यापक प्रतिमानों का संधान करना होगा जो परम्परा से आबद्ध न होकर उसे एक नवीन दिशा प्रदान करते हों।''[18]

वस्तुतः कामायनी का आध्यात्म मानवतावादी दर्शन की ही पृष्ठभूमि बनकर आया है। छायावादी कवियों ने मानवतावाद को आध्यात्म की भूमि पर खड़ा किया है। इस बिन्दु पर आकर भारतीय मानवतावाद पश्चिमी, मानवतावाद से अलग हो जाता है।

डॉ0 भगवानदेव यादव लिखते हैं– ''छायावादी कवियों के मानवतावाद में जहाँ मानव के प्रति आस्था प्रकट कर उसे सुखी देखने की ललक है, वहीं उन्होंने क्रान्तिकारी आध्यात्मिकता का भी उसमें समावेश किया हैः– आत्मवाद की व्यापक भूमि पर खड़ा होने के कारण छायावाद का मानवतावाद पाश्चात्य उपयोगितावादी तथा विकासवादी मानवतावाद के तत्वों, सहयोग, सहानुभूति, प्रेम, सह–अस्तित्व तथा समानता आदि को भी स्वतः अपनाये चलता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि छायावाद का मानववाद सर्वात्मवाद की विस्तृत भूमि पर अधिष्ठित है और उसका मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक मूल्यों को जीवन में सार्थक बनाना है। पाश्चात्य मानवतावाद की भाँति वह दुर्बलों का धर्म नहीं है।''[19]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कामायनी की कथा शुरू होती है देव सभ्यता के विनाश से ; बीच की कथा में मानव सभ्यता का विकास है, किन्तु अन्त में पुनः कामायनी (मनु, श्रद्धा, इड़ा) उसी देव सभ्यता 'शिवधाम' की शरण में चली जाती है। कामायनी की कथा में कुछ सैद्धान्तिक विरोधाभासों से इन्कार नहीं किया जा सकता है, लेकिन इसका महान उद्‌देश्य मानवतावाद है, यह पूरी दृढ़ता से स्वीकार किया जा सकता है।

सन्दर्भ–सूची

1. डॉ0 कृष्ण मुरारी मिश्र; छायावादी काव्य में सौन्दर्य चेतना; पृष्ठ–178; प्रगति प्रकाशन, आगरा; प्रथम संस्करण–1979।
2. डॉ0 भगवान देव यादव; निराला काव्य का वस्तु तत्व, पृष्ठ–146; साहित्य रत्नालय, कानपुर; प्रथम संस्करण–1979।
3. वही; पृष्ठ–147।
4. डॉ0 कृष्ण मुरारी मिश्र; छायावादी काव्य में सौन्दर्य चेतना; पृष्ठ–185; प्रगति प्रकाशन, आगरा; प्रथम संस्करण–1979।
5. प्रसाद चिंतन; सं0–विमला गुप्ता, पुरोवाक; पुष्ठः थ–द;विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
6. कामायनी, जयशंकर प्रसाद ,आमुख, पुष्ठः 6; राजकमल पेपरबैक्स; नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1994।
7. शंभुनाथ; दुस्समय में साहित्यः परम्परा का पुनर्मूल्यांकन; पृष्ठः 90; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; प्रथम संस्करण–2002।
8. कामायनी; जयशंकर प्रसाद; पृष्ठः 67; राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1994।
9. वही; पृष्ठः 68।
10. शंभुनाथ; दुस्समय में साहित्यः परम्परा का पुनर्मूल्यांकन; पृष्ठः 90; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; प्रथम संस्करण–2002।
11. कामायनी; पृष्ठः 69; राजकमल पेपरबैक्स; नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1994।
12. वही; पृष्ठः 74।
13. कृष्ण मुरारी मिश्र; छायावादी काव्य में सौन्दर्य–चेतना; पृष्ठः 186, प्रगति प्रकाशन, आगरा; प्रथम संस्करण–1979।
14. कामायनी; पृष्ठः 135; राजकमल पेपरबैक्स; नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1994।
15. वही; पृष्ठः 82।
16. शंभुनाथ; दुस्समय में साहित्यः परम्परा का पुनर्मूल्यांकन; पृष्ठः 94; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; प्रथम संस्करण–2002।
17. डॉ0 हरिहर प्रसाद गुप्त; सम्पूर्ण कामायनीः पाठ–अर्थ–समीक्षा; पृष्ठः 9–10।
18. प्रसाद चिंतन; संपादकः विमला गुप्ता; पृष्ठः 10–11; विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
19. डॉ0 भगवान देव यादव; निराला काव्य का वस्तुतत्व; पृष्ठः 169; साहित्य रत्नालय, कानपुर; प्रथम संस्करण–1979